धर्म जीवन

वार्षिक चन्दा रु. 50/-

नवम्बर- 2012

* अंह कोष
* आत्मिक अन्धकार और सूक्ष्म सत्य दृष्टि
* सुख अनुराग की भूल भुलैयां
* घमण्डी जन के लिए नेचर में भलाई के सब दरवाजें बन्द हैं
* देवात्मा क विधान
* सत्य धर्म बोध उत्सव में शामिल होकर
* सिगरेट छोड़ने के लिए ये खाएं
* महोत्सव मुबारक

अहं कोष

अंह कोष क्या? इन्सानी जीवन की वे शक्तियां कि जिन के द्वारा एक एक इन्सान अपनी शख्सीयत है और अपनी मैं को खसूसीयत से प्रगट करता व इस में कोई सन्देह नहीं कि इस कोष सम्बन्धी नाना शक्तियों का उचित इस्तेमाल इन्सानी जिन्दगी की रक्षा और विकास में बहुत मददगार साबित होता है, और जो लोग इस कोष सम्बन्धी नाना शक्तियों में जिस दर्जे दुर्बल होते हैं, वह लोग उतने दर्जे हि आम तौर पर आत्म सन्मान के भाव से खाली, औरों को परिचालन करने के अयोग्य, कुवते इरादा में दुर्बल और नीच जनों की ओर से नाना प्रकार के अत्याचार सहने वाले होते हैं। जैसे एक एक मनुष्य इस दुनिया में जिसमानी ताकत के कामों के लिए बहुत दुर्बल अवस्था रखकर जिसमानी मेहनत के कामों के करने की अपने अपने भीतर काफी हिम्मत नहीं देखता, वैसे हि एक एक मनुष्य अहं कोष सम्बन्धी नाना शक्तियों से दुर्बल होने पर अपनी आत्म रक्षा और भलाई के साधनों की कोई प्रतिज्ञा करने और उसे जारी रखने की अपने भीतर काफी हिम्मत अनुभव नहीं करता और इसलिए जो लोग अंह कोष के लाभ को भली भान्त जानते हैं, वह अपने अस्तित्व में इस कोष सम्बन्धी शक्तियों की उचित वर्तमानता को अपने लिए निहायत ज़रूरी चीज अनुभव करते हैं लेकिन इस के साथ इस में भी कोई कोष का उचित व्यवहार उसकी जिन्दगी के लिए बहुत मुफीद चीज़ है, वैसे हि इस कोष का अनुचित अधिकार इस दर्जे दुखदाई और हानिकारक है कि जिस दर्जे आम तौर पर इस कोष से नीचे के किसी कोष का अनुचित अधिकार दुखदाई और हानिकारक नहीं होता। इस कोष का अनुचित अधिकार एक एक इन्सान को यकीनन अन्धा और मूंजी बना देता है कि जैसा अंधा और मूंजी आम तौर पर और किसी वासना या उत्तेजना का अनुचित अधिकार किसी इन्सान को नहीं बना सकता। इस कोष के अनुचित अधिकार का एक बड़ा अनर्थ यह है कि किसी वासना या उत्तेजना के बंधुए इन्सान को उस के बंधुएपन का ज्ञान देना जितना सहज है उतना सहज अंह कोष के बन्धन का ज्ञान देना सहज नहीं। हां, अनेक बार इस पहलु में इस दर्जे का धोखा होता है कि मनुष्य अहं कोष की गुलामी से अन्धे हो कर की हुई अपनी चिन्ताओं और क्रियाओं को अहं कोष से आजादी समझता है। अहं कोष में अधिक फंस जाने के साधनों को अहं कोष के अनुचित अधिकार से बचने के साधन खयाल करता है। तब किसी सच्चे आत्म हित के अभिलाषी जन के लिए इस कोष की लीला को भली भान्त जानने और उससे बचने की किस कदर सख्त जरूरत है!

(पुरानी तहरीर)

धर्म जीवन

खण्ड 25 अंक 11

नवम्बर – 2012

वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

आत्मिक अन्धकार और सूक्ष्म सत्य दृष्टि

मनुष्य के अस्तित्व का विकास पशु जगत से हुआ है। जैसे पशु घोर अन्धकार का जीव है, मनुष्य भी उसी अन्धकार से आया है और बहुत कुछ उसी अन्धकार का शिकार है। उसको अपनी रक्षा और विकास के प्रति सूक्ष्म दृष्टि अपनाने के लिए शायद सदीयां लग जाएं। अभी तो वह बहुत कुछ बुद्धिजीवी होकर, विद्वान होकर अपने प्रकृत भले वा विकास के प्रति पूर्ण अन्धकार में रहकर, खुश वा प्रसन्न रह रहा है। एक तरह से पशु स्तर पर ही जी रहा है।

पशु की दुनियां पेटपूर्ति, नर मादा तक, सन्तान उत्पति तक, उनकी परवरिश तक, शारीरिक अवश्यकताओं पर, शारीरिक सुख दुख तक ही सीमित है। पशु का बुद्धिकोष भी बहुत छोटे मानविय बच्चे तक ही सीमित है। पशु को तो शरीर रखकर शरीर का भी कुछ पता नहीं। वह कितना बड़ा है, उसके आगे क्या है, उसकी शारीरिक बनावट क्या है? शारीरिक दुख क्यों हैं? अच्छी वा पौष्टिक खुराक क्या है? शरीर के अन्दर फेफड़े, हृदय, नाम की कोई चीज़ है और वह क्या काम करती है? शारीरिक रोग क्या हैं, और उनका ईलाज क्या है? वह अपनी टांगे कहीं फंसा तो सकता है, पर निकालने का ढंग नहीं आता। वह अपने सींग फंसा लेता है, पर निकालने की तरकीब नहीं आती। वह अभ्यास से कुछ अच्छी क्रियाएं कर लेता है, परन्तु वह न शिक्षा प्राप्त कर सकता है, न कोई गिणती सीख सकता है। वह अपने शरीर के भले बुरे नियमों को भी नहीं जानता , न उन्हें पालन कर सकता है। वह अपनी खुराक खुद पैदा नहीं कर सकता, न उसे अधिक पौष्टिक बना सकता है। इस सबके लिए वह बुद्धिजीवी मनुष्य पर निर्भर है।

मनुष्य भी इसी अवस्था से उठा है, परन्तु उसकी बुद्धि शक्तियां विकासशील हैं। अपनी बुद्धि के विकास द्वारा उपरोक्त पशुपन के अन्धेरे से निकलता आया है ओर निकलता रहेगा।

मनुष्य ने बुद्धि के विकास के साथ भाषा ज्ञान, विज्ञान, टैकनौलोजी का असीम विकास किया है और सदा करता रहेगा। पहले उसे बाहुबल ही श्रेष्ट दिखता था, फिर उसे ज्ञान, विज्ञान और मान्सिक विकास श्रेष्ट दिखाई देने लगा। मनुष्य ने पौधों के जगत की रक्षा और विकास के नियम जान लिए हैं। पशुओं की नसल को विकसित कर लिया है। फल, पौधों को विकसित कर लिया है।

मनुष्य ने अपने शरीर के अंग अंग को जान लिया है। उनके फंकशन, उनके रोगों पर विजय प्राप्त कर ली है। सफाई, सुन्दरता, कौशल, कला, साहित्य

को दुनियां में प्रसार कर लिया है।

परन्तु इतना कुछ पाकर, धरती, आसमान, समुन्द्रों और ग्रहों पर अपना राज स्थापन करके भी मनुष्य बहुत कुछ पशु जीवन ही जी रहा है।

मनुष्य अपने शरीर को ही मुख्य हस्ती समझ रहा है। शारीरिक सुखों की ओर ही आकर्षित हो रहा है। वह अपनी सारी उपलब्धियों को शारीरिक सुखों की भेंट ही चढ़ा रहा है। शारीरिक पूजा में मस्त है। इन सुखों को प्राप्त करना ही जीवन का लक्ष्य समझ रहा है। धन के द्वारा शारीरिक सुख प्राप्त होते हैं तो अन्धाधुन्ध सारा संसार धन कमाने में लगा हुआ है।

यदि पशु पेट पूर्ति के लिए जीता है तो मनुष्य शारीरिक वा नफसानी सुखों के लिए जीता है। यह जीना पशु स्तर पर जीना है। मनुष्य अपने रहन सहन लिबास, जेवरों पर लाखों अरबों रूपये खर्च करता है, वासना पूर्ति में पागल है, यह सब पशु जीवन ही है। यह मोटी पशु दृष्टि है।

गुरू महाराज ने मनुष्य के अस्तित्व के विषय में मोटी सचाई दर्शाते हुए फरमाया है: -

"हे मनुष्य तू केवल शरीर नहीं, तू आत्मा है, केवल शारीरिक सुखों की तृप्ति में अपनी उमर बर्बाद मत कर"

मनुष्य हस्ती में मुख्य, मूल, असल वा सार वस्तु मनुष्य की जीवनी शक्ति है, मनुष्य का आत्मा है।

अपनी रुह, अपनी आत्मा की सोझी, होश और उसके सम्बन्ध में सत्य ज्ञान के बिना मनुष्य जीवन पशु जीवन ही रहता है। यह अन्धेरे की अन्ध दृष्टि है।

आत्मा क्या है? उसकी बनावट क्या है? उसके रोग क्या हैं? उसके रोगों से पतन क्या है? पतन से मोक्ष कैसे हो सकती है? आत्मा का विकास क्या है? उक्त ज्ञान के बिना मनुष्य अन्धा है, पशु है, कई हालतों में पशु से भी निकृष्ट होने के लिए मजबूर है।

आत्मा की सोझी कैसे और कहां से प्राप्त होती है? आत्मिक रोगों का प्रकृत बोध कैसे प्राप्त होता है? आत्मा की कुशल वा पतन का बोध कहां से प्राप्त होता है? किस रोशनी में यह बोध प्राप्त हो सकता है?

सिर्फ अपने लिए जीना जीवन बर्बाद करना है। दूसरों के अधिक से अधिक निस्वार्थ काम आने से आत्मा बचती है और उसका विकास होता है। इस सत्य दृष्टि की प्राप्ति की अवश्यकता है।

जीवन दाता कौन हैं? उनकी ज्योति और तेज क्या हैं? वह ज्योति और तेज मुझे रूह का और उसके रोगों का ज्ञान देने के लिए, रूह के रोगों से बचाने के लिए और रूह में परहित भावों का विकास करने के लिए कितना महान और अद्वितीय अमृत हैं, यह सोझी पाने की अतिशय अवश्यकता है।

जीवन दाता से जुड़ने के, उनकी ज्योति और तेज प्राप्ति के कौन कौन से नियम हैं? कौन से सर्व्वोच्च भाव हैं, जिनसे जीवन दाता से जुड़ा या उनके ज्योति तेज तक रसाई हो सकती है उन सर्व्वोच्च भावनाओं की वा उनकी प्राप्ति के नियमों की सोझी और दृष्टि पैदा होने की अवश्यकता है।

अपने आत्मा सम्बन्धी सच्ची होश, सोझी, विवेक सम्बन्धी उक्त सब जाग्रतियों के प्रति लालसा बिना मनुष्य अन्धा रहता है और पशु स्तर का ही जीवन जीता है। दुखों वा विनाश का राही बना रहता है। ऐसा होने के लिए बेबस वा लाचार है। सूक्ष्म सत्य दृष्टि से खाली रहता है।

गुरू महाराज ने अपने एक लेख के अन्दर इस विषय पर कमाल की रोशनी दी है: -

"आत्म अन्धता वा अबोधता के कारण अपने

आत्मा की निसबत अपने शरीर को अधिक सत्य वा सार समझते हैं। और उसको आत्मा का औज़ार जानने और उसको अपनी वा औरों की आत्मिक भलाई में अधिक से अधिक सेवाकारी बनाने के इच्छुक होने की बजाए, उसको जहां तक हो सम्भाल सम्भाल कर रखते और कम से कम सेवाकारी बनाने की कोशिश करते हैं और उनकी इस उल्टी गति वा उल्टी दृष्टि का नतीजा आत्मिक जगत के अटल नियमानुसार यह होता है, कि उनके आत्मा बजाए देवात्मा के देव प्रभावों को पाने की योग्यता और अपने अस्तित्व के सम्बन्ध में सूक्ष्म और सत्य दृष्टि में उन्नति प्राप्त करने के ठीक उसके उल्ट ग़ल्त हालात में ढलकर कठोर होते चले जाते हैं। वह इस सचाई को देखने के भी अयोग्य हो जाते हैं कि जब तक किसी मनुष्य में परसेवा सम्बन्धी कोई ऐसा शुद्ध सात्विक भाव या अनुराग पैदा न हो जो उसके आत्मा का सदा चालक रह सके और जिसके लिए वह अपना कुल शरीर और उसका हर प्रकार का सुख और अपना कुल दिमाग और अपना सब कुछ अपर्ण कर सके और इससे भी बढ़कर उसको अपने अत्मिक मोक्ष और आत्मिक विकास के लिए देवात्मा के साथ जिस अन्मोल सात्विक प्रेम के साथ बंधने की अवश्यकता है, उसके पैदा करने के लिए इच्छुक वा फिक़रमन्द हो सके और फिर उनके देव प्रभावों को पाकर अपने नीच बन्धनों वा नीच अनुरागों से इस कदर ऊपर हो सके कि वह उसे अपनी और घसीट कर उसको गुमराह वा भृष्ट न कर सकें, तब तक जिस प्रकार वह अपने नीच अनुरागों और अपनी नीच घृणाओं की गुलामी और उनके द्वारा अपने अवश्यक आत्मिक पतन से अपनी रक्षा नहीं कर सकता, उसी प्रकार अपने किसी सेवा सम्बन्धी काम को लगातार जारी नहीं रख सकता।

"सब मनुष्य मात्र से ऊंचा दर्जा रखने वाले जो देवात्मा हैं, उनके देवरूप की हक़ीकत का भी या तो कोई सच्चा बोध नहीं रखते या नाममात्र बोध रखते हैं। उनमें ऐसे ही जन अधिक हैं कि जो अपने भीतर कई अति अवश्यक उच्च भावों को न रखने के कारण, उनके साथ या तो अपना कोई सम्बन्ध अनुभव नहीं करते, या केवल नाम मात्र अनुभव करते हैं। वह अपने नीच भावों के द्वारा अपने परिवारिक जनों के साथ जुड़े होने के कारण उनके साथ जो असल सम्बन्ध अनुभव करते हैं, और उन नीच भावों की प्रेरणा और उनकी तृप्ति के लिए, वह उनके सम्बन्ध में जिस प्रकार से फिकरमन्द होते हैं और कई प्रकार की क्रियाएं करते हैं, वैसी बात उन्हें देवात्मा के सम्बन्ध में नज़र नहीं आती। वह अपनी उल्टी दृष्टि के कारण अपनी पत्नी, अपने पति, अपनी पुत्री, अपने पुत्र, अपनी बहन या अपने भाई को देवात्मा की निसबत अपना बहुत बढ़िया सम्बन्धी देखते वा महसूस करते हैं और उन्हें देवात्मा से बड़ा और अपने लिए अवश्यक सम्बन्धी देखते और महसूस करते हैं। इस उल्टी दृष्टि द्वारा रात दिन झूठ की पैरवी करके आत्मा को अन्धा और मैला और देवात्मा के सम्बन्ध में किसी उच्च भाव के पैदा करने के अयोग्य बनाते रहते हैं।

वह यह देखकर वा जानकर भी कि भगवान देवात्मा क्या उनकी और क्या औरों की अन्धकार ग्रस्त और विनाश की ओर गति करने वाले आत्माओं के उधार और उनकी रक्षा और भलाई के लिए किस प्रकार बेचैन रहते हैं और किस प्रकार गहरा संग्राम करते हैं और यदि ऐसे नीच आत्मा की पहली जिन्दगी में कोई बेहतरी आई है और उनका एक या दूसरी प्रकार के महा हानिकारक मिथ्या विश्वासों या पापों आदि से कुछ भी उधार हुआ है या उन्हें धर्म का कुछ भी सत्य ज्ञान प्राप्त हुआ है, तो केवल और केवल

देवात्मा के द्वारा, उनके किसी परिवारिक या किसी और सम्बन्धी ने, न केवल यह कि उन्हें यक दुर्लभ दान नहीं दिया, बल्कि उसने उनके आत्मा को नीच और पतित बनाने में अवश्य भाग लिया है। फिर भी वह एक तरफ आत्म बोधी न होने और दूसरी ओर उल्टी दृष्टि रखने के कारण अपने ऐसे दुर्लभ दान के दाता देवात्मा के मुकाबले में अपने उन सम्बधिन्यों को बहुत बड़ा और बहुत नज़दीकी समझते हैं ओर देवात्मा के किसी शारीरिक रोग या उनकी किसी पीड़ा या उनकी कोई दैनिक अवश्यकता या उनके हृदय में उनके वा उनके सम्बन्धियों और उनको छोड़ और आत्माओं के कल्याण के लिए जो कुछ बेचैनी रहती है और जिस जिस प्रकार की उच्च चिन्ता रहती है और चलती है और अपने जीवन ब्रत की सिद्धि के लिए, जिस जिस प्रकार के फिकरों में रहते हैं, उनको वह अपने अन्दर में केवल कुछ भी अनुभव नहीं करते, उल्टा अपने भीतर ऐसा अनुभव कराने वाली उच्च शक्तियों पैदा होने की भी कोई अवश्यकता अनुभव नहीं करते। इससे भी बढ़कर ऐसे बहुत सारे आत्माओं के भीतर उच्च जाग्रति करने के लिए, उनको स्मरण करके, उन तक अपने जिन दुर्लभ देव प्रभावों को पहुंचाने का यत्न करते हैं उसकी भी वह कोई महिमा अनुभव नहीं करते। समय पर उठकर और उनके साथ आत्मिक योग करके उनके देव प्रभाव प्राप्त करने के स्थान पर वह अपने बिस्तर पर मौज से सोए रहना पसन्द करते हैं और अपनी ऐसी महा घिनौनी क्रिया के साथ इस प्रकार अपमान वा निरादर करके खुश रहते हैं और अपने हृदय की कठोरता को बढ़ाते हैं।"

बलदेव सिंह

अध्यात्म से जोड़ पैनी नजर को बदलें दिव्य दृष्टि में

गिद्ध को नोचने में, चील को लूटने में और कौए को ताड़ने में महारथ हासिल है। इन तीनों प्राणियों में एक बात जो समान है, वह है इनकी पैनी नजर। इनकी इस खूबी से कोई बच नहीं सकता। अपनी इस योग्यता का तीनों एक इस्तेमाल यह करते हैं कि दूसरों की मेहनत से अपना भोजन प्राप्त करते हैं। सांसारिक जीवन में कुछ लोग इन तीनों की तरह पैनी नज़र का मकसद ऐसा ही बना लेते हैं। ये पैनी नज़र वाले जानते हैं कि जो सचमुच अंधे हैं, उनकी आड़ में तो मौके का फायदा उठाना ही है, लेकिन ये इस जुगाड़ में भी रहते हैं कि आंख वालों की चकाचौंध में डाल उस अस्थाई अंधत्व की ओट में भी अपना स्वार्थ सिद्ध कर लिया जाए। आज प्रबंधन के युग में पैनी नज़र होना एक गुण है, योग्यता है, लेकिन इसे थोड़ा अध्यात्म से जोड़ दिया जाए तो यही दिव्य दृष्टि बन जाएगी। दिव्य दृष्टि अपने अधिकार को तो देख लेती है, लेकिन दूसरे के शोषण, मजबूरी का लाभ उठाने की अनुमति नहीं देती। जैसे सूर्य प्राप्त करना हो तो पंख खोलने की तैयारी रखनी होगी और जीवन में धर्म प्राप्त करना हो तो ऊंचा उठना होगा। यह उम्मीद न रखें कि धर्म या सूर्य हमारे लिए नीचे आएगा। ये हमारे द्वार पर नहीं आएंगे, हमें ही अपनी देहरी छोड़कर उनकी ओर जाना होगा। अध्यात्म भी अभ्यास और श्रम मांगता है। यह श्रम हमारे भीतर चील, गिद्ध, कौए जैसी परजीवी वृत्ति खासतौर पर दृष्टि से नोचने वाली वृत्ति से मुक्ति दिलाएगा। हानि-लाभ के लेन-देन वाले इस दौर में निज हित की फिक्र रखें, लेकिन साथ ही साथ परहित का भाव भी न छोड़ें।

सुख अनुराग की भूल भुलैयां

मनुष्य की प्रकृति बड़ी गुंझलदार है, इसको मनुष्य के लिए समझना महा कठिन ही नहीं, असम्भव है। फिर जब हम किसी मनुष्य के साथ किसी पक्षपात से जुड़ जाते हैं तो उसको समझना और भी कठिन हो जाता है।

परम पूजनीय भगवान देवात्मा ने यह सत्य मनुष्य मात्र पर जाहिर किया है कि मनुष्य सुख अनुरागी है और जहां से उसे सुख मिलता है, उसका पक्षपाती बन जाता है या यह कहें कि पक्षपाती बनना उसके लिए अवश्यम्भावी है। वह सुख चाहे कोई दुनियावी सुख हो, चाहे मान प्रशंसा, बड़ाई का सुख हो, चाहे अपने पक्षधारी द्वारा अपने पक्ष को सही बताने का सुख या किसी भी अपने शारीरिक, मान्सिक अर्थात् अपने विचार के समर्थन का सुख हो।

हमारी यह सुख अनुरागी प्रकृति क्या अपने प्रति और क्या दूसरों के प्रति हमें बहुत बड़े भ्रम में रखती है। जैसे एक एक बच्चा अपने माता पिता को सबसे प्रिय समझता है, क्योंकि वह हर सुख जिसकी उसे इच्छा है, वह माता पिता उसे देते हैं, वह अपने माता पिता को प्यार करता है, दूसरों के पास भी अपने माता पिता की बढ़चढ़ कर प्रशंसा करता है, परन्तु वही माता पिता जब उसका कोई सुख पूरा करने में असमर्थता दिखाते हैं या वह सुख बच्चे के लिए हानिकारक समझकर उसे नहीं देना चाहते, तो बच्चे की नज़रें बदल जाती हैं, वह अपने उन्हीं माता पिता को घृणा करने लगता है, उन्हें स्वयं बुरा भला कभी कभी दिल दिल में और कभी बोलकर भी कहता है, दूसरों से उनकी निन्दा सुनने लग जाता है, माता पिता के विरोधियों के साथ मिल जाता है, विरोधी उसका लाभ भी उठाते हैं। वही बच्चा जो माता पिता को प्यार करता था, उनके बिना नहीं रह सकता था, केवल सुख का भाव था, इसलिए ऐसा सुख अनुरागी मनुष्य, (जैसे कि हम सब हैं) सुख की पूर्ति न होने पर अपना रूप बदल लेता है।

इसी प्रकार देव समाज की संस्कृति में हमें श्रद्धा, कृतज्ञता की मोटी सी परिभाषाएं समझ में आ जाती हैं, तो हम किसी के गुणों को देखकर इस भ्रम में पड़ जाते हैं कि हम श्रद्धा का साधन कर रहे हैं या कृतज्ञता का साधन कर रहे हैं। परन्तु 99.9% वह हमारे नीच सुख अनुराग से प्रेरित और हमारे पक्ष पर आधारित साधन होते हैं। जब हम श्रद्धा का साधन करते हैं तो केवल उन लोगों के गुणों को ही सामने लाएंगे या ब्यान करेंगे जिनका हमारे हृदय में पक्ष है। उनकी कुर्बानी और सेवा का बढ़चढ कर वर्णन करेंगे, परन्तु उनसे भी अधिक कुर्बानी और त्याग करने वालों को किसी खातिर में नहीं लाते। देवात्मा के मिशन में काम करने वालों के प्रति भी हमारा यही रवैया रहता है। आज के युग में देव समाज के लिए जो कोई थोड़ा से काम करता है, उसकी प्रशंसा के पुल बांध दिए जाते हैं और उन्हें बड़ी से बड़ी पदवी के योग्य घोषित करके हम समझ रहें हैं कि हमारे भीतर देव समाज के काम

करने वालों की हृदय की गहराई से कदर है, जबकि जिन्होंने सारी जवानी इस काम में लगाई, देव समाज के हृदय परिवर्तन के काम में बहुत बड़ा योगदान दिया, पापी इन्सानों को गुरू के देव प्रभावों से बदला, देव समाज की संस्थाओं को बनाने और बढ़ाने में योगदान दिया, देव समाज की करोड़ों की सम्पत्ति बनाई, और अब भी वह अपनी योग्यता और परिपक्व अनुभव से इस मिशन का हित कर सकते है, उनको किसी खातिर में नहीं लाते, तो गुरू मिशन के प्रति लगन या किसी के गुणों के प्रति श्रद्धा का सूचक हमारा व्यवहार नहीं, बल्कि अपने पक्षधरों के प्रति ही पक्षपात पूर्ण रवैया है, यह सच्चाई कड़वी है, परन्तु सत्य सदा ही कड़वा होता है।

यही हाल हमारी कृतज्ञता का है। कई जनों के व्यवहारों से ऐसा लगता है कि वह अपने बड़े से बड़े उपकारी को लताड़ सकते हैं और उनको अपमानित करके शायद वह अपनी जीत अनुभव करते हैं, परन्तु किसी सभा में कुछ उपकारियों के उपकारों का ब्यान करके, जिनसे वर्तमान में उनके किसी सुख की पूर्ति होती है, वह भ्रम में पड़ जाते हैं कि उनके साधन कृतज्ञता के साधन है। देवात्मा की शिक्षा के अनुसार सबसे बड़े उपकारी हमारे अध्यात्मिक उपकारी हैं। जो उन्हें भूल जाते हैं, या उनके उपकारों को न केवल बार बार अनुभव नहीं करते बल्कि उन्हें अपमानित कर सकते हैं, और उसके बाद कोई दुख और पश्चाताप महसूस नहीं करते और यह अनुभव भी नहीं कर सकते कि उनके दुर्व्यवहार का किसी उपकारी के हृदय पर कितना आघात लगा है तो इस भ्रम में जीएं कि वह कृतज्ञता का भाव पैदा कर रहें हैं, यह अध्यात्मिक नियमों के ही विरुद्ध है।

यह एक एक भावों के लिए सच्चाई नहीं हमारी अवस्था ऐसी ही है, सुख अनुरागी मनुष्य ऐसा ही कर सकते हैं, हम केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं, हर उस पदार्थ और जीव के पक्षपाती बन जाते हैं, जिससे हमें किसी प्रकार का भी सुख मिलता है। मनुष्य होना और पक्षपाती होना एक ही बात है। हम तो अपनी विचारधारा के ही इतने पक्षपाती हो जाते हैं कि उस विचारधारा पर विचार करने या उस पर निष्पक्ष किसी से कोई राए लेने में असमर्थ हो जाते हैं। यदि कोई यह कहे कि कुछ निष्पक्ष मत रखने वाले कुछ जन किसी विचारधारा पर बैठकर विचार करें और कोई ठीक निष्कर्ष निकालें, तो इसके लिए भी हम तैयार नहीं होते। मनुष्य का यह दुर्भाग्य केवल उसे ही नहीं, जिस जिससे वह सम्बन्धित है, उसको भी ले डूबता है।

आवश्यकता है कि हम अपनी अपनी अवस्था पर विचार करें और अपनी अपनी योग्यता के अनुसार उससे कुछ उभरें।

सुरजीत बराड़

"इस तथ्य को अच्छी तरह जानो और पहचानो कि आपकी आत्मा की रक्षा और उन्नति दूसरों की वासना – रहित सेवा पर निर्भर करती है।"

देव आत्मा

घमण्डी जन के लिए नेचर में भलाई के सब दरवाज़े बन्द हैं

जब कोई मनुष्य अपने आप का इतना अनुरागी या प्रेमक हो जाता है कि वह अपनी विविध बातों को झूठ-झूठ बढ़िया जानता और समझता है, तब उसका अपने सम्बन्ध में इस प्रकार का मिथ्या विश्वास या पक्षपात घमण्ड कहलाता है।

वह अपने में वास्तविक गुण या योग्यता न रख कर भी उसका झूठ-मूठ अपने में होना प्रकट करता है।

वह अपनी किसी योग्यता व कुशलता पर सत्य की सीमा से बढ़कर भरोसा करता है।

वह अपनी किसी अयोग्यता को अयोग्यता अनुभव नहीं करता, किन्तु इस के उल्ट फूलता और अकड़ता है। किसी की अपेक्षा आप हीन होकर भी उसे अपनी अपेक्षा तुच्छ अनुभव करता है।

वह अपनी किसी बुराई के देखने के अयोग्य होकर भी किसी और में झूठ-मूठ भी कोई बुराई देखने व वर्णन करने व सुनने के लिए तैयार रहता है।

वह किसी की आप कोई झूठी निन्दा करके व किसी और से सुनकर प्रसन्न होता है।

घमण्डी जन अपने विषय में किसी सत्य को मिथ्या और किसी मिथ्या को सत्य देखता है।

वह दूसरों के श्रेष्ठ और उच्च गुणों के सच्चे सौन्दर्य और उनकी सच्ची महिमा को देखने के योग्य नहीं रहता।

वह नाना विषयों में मिथ्या-दृष्टा और मिथ्या-विश्वासी होकर भी अपने आप को सदा ठीक ठाक विश्वास करता है और अपने से भिन्न मत व विश्वास रखने वाले को भ्रान्त, भृष्ट और गुमराह समझता है।

वह बलशाली होकर अपने जैसा विश्वास या मत न रखने वालों को नीच घृणा करता है, उन पर अत्याचार करता है और उन्हें नाना प्रकार से सताता है, यहां तक कि उनकी हत्या तक कर देता है।

वह अपनी अपेक्षा किसी विषय में किसी और जन को श्रेष्ठ वा बढ़िया समझ कर कष्ट बोध करता है।

वह औरों की झूठी अप्रशंसा करके खुश होता है।

वह जिन जनों नीच घृणा करता है, उनसे फट जाता या दूर हो जाता है। उनसे परे-परे रहता है। उनका मुंह न देखना, उनसे कोई बातचीत न करता उन पर कोई मिथ्या कलंक लगाना, उनकी कोई उचित सहायता न करना बल्कि उनकी हानि करना व किसी और से कराना भी घमण्डी जन के लिए अनिवार्य हो जाता है।

भगवान् देवात्मा फरमाते हैं कि घमण्ड का प्रबल अधिकार रखने वाले जन के लिए नेचर ने भलाई के सब रास्ते बन्द कर दिए हैं। उसने ऐसे जन की जिन्दगी पर यह मोहर लगा दी है कि वह बेहतर न बन सके।

"यूं तो सब नीच अनुराग और नीच घृणाएं आत्मा के लिए हानिकारक हैं परन्तु जो नीच अनुराग आत्मिक कोढ़ का काम करता है वह अहं (घमण्ड) है, जो सच्चे या झूठे अवगुणों का औरों के पास प्रकाश करके विष खाने और औरों के भीतर भी विष संचार करने का काम करता रहता है।"

यह बात अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए कि किसी की बुराई को भी तब तक किसी और पर प्रगट न करो, जब तक तुम्हारा यह उद्देश्य न हो कि मैंने इनकी इस बुराई को दूर करना है। वरना आदमी में ख़्वामख़्वाह घमण्ड पैदा होता है कि वाह! मैं कैसा अच्छा हूं और यह कैसा खराब है।

तुम सोचो कि जैसे किसी गल्ती को औरों के पास बताने को दिल चाहता है, वैसे ही क्या अपनी किसी गल्ती को भी किसी और के पास बताने को दिल करता है?

यदि कोई सच्ची गल्ती भी बिना उचित कारण के किसी और को बताई जाए, तो उस में भी न समाज का, न गुरू का, न उस जन का भला है। ऐसा जन सेवक

रहने के भी योग्य नहीं परन्तु कर्मचारी तो वह किसी प्रकार से भी नहीं रह सकता। याद रखो! कि दीन हो कर ही भलाई का रास्ता खुलता है। घमण्डी के लिए भलाई के सब रास्ते बन्द हैं।

"घमण्डी जन कभी भी अपने विषय में यह विचार नहीं कर सकता कि मुझ में भी कोई आत्मिक रोग है, वह यह समझता है कि मैं जो कुछ जानता हूं, वह ठीक जानता हूं। वह सत्य को लात मारता है। वह हर समय झूठ में रहना चाहता है। उसकी बुराई पर यदि कोई चोट लगाई जाए तो वह सांप की मानिन्द फन निकालता है। घमण्डी जन के लिए इस दुनिया व अगली दुनिया के लिए पतन ही पतन है।"

भगवान् देवात्मा में सब प्रकार के सत्य और शुभ के लिए पूर्ण अनुराग और सब प्रकार के मिथ्या और अशुभ के लिए पूर्ण घृणा भाव वर्तमान है, इस लिए नेचर के अटल नियम के अनुसार उनके आत्मा में ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा और घमण्ड भाव के बीज भी जन्मकाल से ही नहीं आए।

श्रद्धा और सम्मान के भाव घमण्ड भाव के विरोधी भाव हैं। भगवान् देवात्मा में श्रद्धा और सम्मान के भाव पूर्ण रूप से वर्तमान थे, जिसका पता नीचे लिखी कुछ घटनाओं से लगता है-

भगवान देवात्मा के बागीचे में गयाद्दीन नाम का एक माली काम करता था। वह अपने काम को चाहे कोई देखे या न देखे, बहुत लगाव और निष्ठा से पूरा करता था। भगवान् देवात्मा उसकी इस कर्त्तव्य-परायणता से बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने एक अवसर पर उसको फूलों का हार पहनाया। उसके माथे पर तिलक किया और उसको कुछ उपहार दिया और मुक्त-कण्ठ से उसके काम की सराहना की। किस कदर दीनता!

सन् 1928 के महोत्सव पर भगवान् देवात्मा ने अपनी महा-सभा के आरम्भ में नेचर को सम्बोधन करके फरमाया था कि इस पृथ्वी की तुलना में एक राई के दाने की तो फिर भी कुछ हकीकत है, परन्तु इस अति महान्, अति विशाल नेचर की तुलना में मेरी अपनी हस्ती की क्या हकीकत है? उन्होंने बताया कि उनकी अपनी हस्ती की उत्पत्ति भी इसी नेचर से है और उसकी रक्षा और सच्ची सफलता भी एकमात्र इसी नेचर के सत्य नियमों पर निर्भर है।

कई अवसरों पर ऐसा हुआ है कि अपनी श्रद्धा के योग्य माता जी के दर्शन करते ही भगवान् के भीतर का सम्मान का भाव इस जोर से उत्तेजित हो गया है कि वह फौरन ही मधुर दीनता और श्रद्धा से भर कर जमीन पर साष्टांग प्रणाम करने और अपनी माता के चरण छूने के लिए मजबूर हो गए हैं। उन्होंने इस बात की कतई परवाह नहीं कि ज़मीन पर चटाई या दरी बिछी हुई नहीं है। उस समय उनके सामने केवल प्यारी माता की उपकारी हितकारी तस्वीर होती थी और इसके सिवाए कुछ नहीं।

एक बार पूजनीय भगवान् को स्वप्न में एक श्रद्धेय महात्मा के दर्शन हुए कि जिनके लिए उनमें गहरा सम्मान वर्तमान था। भगवान् के भीतर फौरन यह भाव पैदा हुआ कि वह इन महात्मा के चरणों को छूकर प्रणाम करें, परन्तु इसके साथ ही फौरन उनके दिल में यह ख्याल गुजर गया कि मैंने अपने हाथ नहीं धोए हैं। अब यद्यपि भगवान् सफ़ाई की मूर्ति हैं, तो भी सम्मान के निहायत पवित्र और उच्च भाव ने उनके दिल और दिमाग पर इस कदर प्रबल अधिकार प्राप्त किया हुआ था कि उन्होंने हाथ धोए और इस महात्मा के चरणों को छूआ।

अपने किसी बड़े-से-बड़े विरोधी जन के गुण को सामने लाकर भगवान् उसके उस गुण की सराहना करने के बिना नहीं रह सकते थे। आर्य समाज के लाला मुंशी राम (स्वामी श्रद्धा नन्द) ने भगवान् की पवित्र ज़ात पर कई झूठे और बे-बुनियाद अभियोग लगाए थे, परन्तु भगवान् ने अपने अनुयाइयों के सम्मुख कितनी ही बार उनके इस गुण की प्रशंसा की है कि वह अपने गुरूकुल के लिए चन्दा इकट्ठा करने का काम बहुत कुरबानी और जोश से करते रहे हैं। इसी प्रकार लाला हंसराज भूतपूर्व प्रधानाचार्य डी० ए० वी० कालिज लाहौर की भगवान् ने उनकी विद्या विषयक सेवाओं की बहुत सराहना की थी।

भगवान् उन तमाम हितकर सुझावों को चाहे उनके तुच्छ सेवकों की ओर से भी क्यों न दिए जाएं, पूरे ध्यान से सुनते हैं। उन्होंने श्रीमान् देवत्व सिंह जी से उनके आत्माओं में काम करने के तजुरबों को बहुत ध्यान से सुना। एक छोटे से बच्चे की बात को भी भगवान झुक कर और अपने कान को उसके मुँह के पास ले जाकर बड़े ध्यान से सुनते थे।

भगवान के एक कर्मचारी बीमार थे। हमदर्दी से भर कर भगवान् उनके कमरे में गए। उन्होंने देखा कि उनके पास पूरा बिस्तर नहीं है और उनके कमरे में सामान भी अस्त-व्यस्त अवस्था में पड़ा है। भगवान् ने स्वयं उस कर्मचारी के बिस्तर को ठीक तरह से बिछाया। अस्त-व्यस्त सामान को ठीक अवस्था में रखवा। बीमार कर्मचारी की चारपाई को एक ऐसे स्थान पर रखवा कि जिस से वह खिड़की में से कमरे से बाहर का दृश्य देख सके और अपने दिल को बहला सके।

देव समाज के एक माननीय कर्मचारी की एक रिश्तेदार स्त्री के पर्वताश्रम सोलन में रहने के लिए एक कमरे की आवश्यकता पड़ी। यह कमरा उन दिनों रहने के लिए इस्तेमाल नहीं होता था, बल्कि इसमें कुछ सामान रखवा जाता था। भगवान् ने अपने कीमती समय के कई घण्टे अपने आदमियों से इस कमरे की सफाई करवाने में लगवाए। उन्होंने स्वयं भी कमरे की सफ़ाई में भाग लिया।

श्रीमान् मंगलदेव जी बहुत कुरबानी से भगवान् के मिशन की सेवा करते थे। उनकी सेवा से प्रभावित होकर भगवान् ने उनके पांव धोए और अपने हाथ से उनको खाना बना कर खिलाया।

श्रद्धेय डाक्टर कुमारी प्रेमदेवी जी देव धर्म मिशन की अनुरागी सेवाकारी थीं, नौजवानी की आयु में ही उनका देहान्त हो गया। पूजनीय भगवान् नंगे पांव श्मशान भूमि में गए और श्रद्धेया जी की अस्थियों और राख की ढेरी के पास खड़े होकर फ़रमाया कि यदि तुम किसी राजा की महारानी होती, तो भी मैं तुम्हें इस प्रकार सम्मान देने न आता। परन्तु तुमने जो देख धर्म मिशन की सेवा की है, उसके लिए मैं तुम्हें हृदय-गत भावों से सम्मान देने आया हूँ।

जब तक अहंकार है, तभी तक अपने दोषों का अस्वीकार है

हम मानें न मानें, पर यह सत्य है कि हम अपनी कई कमजोरियों को स्वीकार नहीं करते। यह अस्वीकृति ही हमारी अशांति का कारण बन जाती है। कई दफा हम दूसरों पर टिप्पणी करते हैं कि क्या जानवर जैसा व्यवहार कर रहे हो। दरअसल में सभी लोग कहीं न कहीं भीतर से पशु होते हैं। कुछ अपनी पशुता को भीतर रोक लेते हैं तो कुछ बाहर प्रकट कर जाते हैं, लेकिन दोनों ही स्थिति में मनुष्य अपनी पशुता को स्वीकार नहीं करता। हमारे भीतर यह कौन है जो हमें स्वीकार नहीं करने देता? यह है हमारा अहंकार। जैसे ही हम अपने भीतर की पशुता को स्वीकार करते हैं, सबसे पहली चोट हमारे अंहकार को लगती है। यह अहंकार ही हमें समझाता है कि हम पशु जैसे नहीं हैं, यह जो बुराई है यह हमारे भीतर दूसरों के कारण है, वरना हम तो श्रेष्ठ ही हैं। जिस दिन हम अपने काम, क्रोध और लोभ को स्वीकार करते हैं, उसी दिन हम इनसे पार जाने की संभावना का निर्माण भी कर लेते हैं। पार जाने का अर्थ है काम, क्रोध और लोभ में मुक्त हो जाना। अपनी कमजोरियों में गहरे उतर जाने से हमारा और उनका परिचय होता है। देख तो हम लेते हैं, पर स्वीकार नहीं करते और जैसे ही स्वीकार किया, बस हम अपनी बुराइयों से मुक्त हुए। दूसरे हमें जब टोकें तो एकदम खारिज न करें, थोड़ा धैर्य से विचार करें कि जो टिप्पणी हमारी कमजोरियों पर की जा रही है, उसे भीतर जाकर कहां पकड़ा जाए। पकड़ में जरूर आएगी, क्योंकि भीतर कहीं न कहीं है जरूर यह कचोटती है। इसके लिए थोड़ी देर प्राणायाम-ध्यान का अभ्यास जरूर करें। यही वह मार्ग है जो हमें अपने भीतर ले जाकर कुछ चीजों की खोज में मदद करेगा।

देवात्मा का विधान

कुछ दिन हुए कए भद्र जन ने मुझे बहुत ज़ोर देकर प्रेरणा की कि आप विधान में आ जाओ, उनके यह शब्द सुनकर मैं सोच में पड़ गया कि आख़िर देवात्मा का विधान है क्या?

इस विषय पर विचार करते करते निम्नलिखित विधान की रूप रेखा मेरे सामने प्रकट हुई। किसी समाज का विधान देवात्मा का विधान नहीं यह सत्य भी चमका।

परम पूजनीय भगवान देवात्मा अद्वितीय आविर्भाव और धर्मावतार हैं। वह विकास क्रम की उच्चतम देन हैं। मनुष्य श्रेणी से असंख्य गुणा ऊंचा और ऊपर का रुतबा और श्रेणी रखते हैं। मनुष्य की प्रकृति से पूर्णत: पृथक प्रकृति रखते हैं। वह सुख लालसाओं की जकड़ से पूर्णत: ऊपर हैं। पाप मला से पूर्ण पवित्र हैं।

देवात्मा पूर्ण शुभ स्वरूप है, शुभ मूर्ति हैं, शुभ के स्त्रोत हैं, शुभ के पूर्ण अनुरागी हैं, शुभ ही शुभ लाते हैं। शुभ के सिवा कुछ नहीं लाते। शुभ ही शुभ चाहते हैं, शुभ के सिवा, हित के सिवा, भलाई के सिवा और कुछ नहीं चाहते। ऐसा देव रूप आज तक किसने देखा या सुना था।

देवात्मा अशुभ के, पाप के, बुराई के एवं नीचता के पूर्ण शत्रु हैं, पूर्ण विरोधी हैं, पाप को पूर्ण घृणा करने वाले हैं। अशुभ का वा पाप का ऐसा बड़ा और मुकम्मल शत्रु भी आज तक किस ने देखा और सुना था?

देवात्मा पूर्ण सत्य स्वरूप हैं, सत्य मूर्ति हैं, सत्य के मुजस्समा हैं, सत्य के पूर्ण अनुरागी हैं, सत्य ही सत्य लाते हैं, सत्य के पूर्ण साथी हैं, सत्य के पूर्ण खोजी हैं, सत्य के पूर्ण समर्थक हैं, सत्य के पूर्ण पक्षधर है, ऐसा सत्य का प्रेमी और पुजारी, ऐसा सत्य का आशिक आज तक किसने देखा था?

देवात्मा असत्य के, झूठ के, मिथ्या के पक्के और पूर्ण शत्रु हैं, झूठ के पक्के वा पूर्ण विरोधी हैं या झूठ को घृणा करने वाले हैं, झूठ को गारत करने वाले, कुचलने वाले हैं।

देवात्मा का सर्वोच्च विधान एक ही है, शुभ और सत्य का प्यार, पाप और झूठ की शत्रुता, सत्य और शुभ का साथ, पाप और झूठ का विरोध, शुभ और हित की, सत्य और केवल सत्य की इबादत, पाप और झूठ से, अशुभ और मिथ्या से पूर्ण बग़ावत।

देवात्मा के लिए शुभ का लाना, सत्य का लाना या शुभ और सत्य सबसे प्रथम है और देव समाज कौंसल, प्रतिनिधि सभा, हां देव शास्त्र भी इसके पीछे हैं। देवात्मा का सर्वोच्च विधान शुभ लाना है। अशुभ मिटाना है। सत्य लाना है, और झूठ को कुचलना और ग़ारत करना है।

जो शुभ का जहां तक साथ देता है, सत्य का साथ देता है, और जितना पाप को घृणा करता है, झूठ को जितना घृणा करता है, वह उतना देवात्मा का है, वह उतना ही देव विधानी है।

जो शुभ का जहां साथ नहीं देता, पाप का और बुराई का साथी है, जो सत्य का साथ नहीं देता, झूठ का साथी है, वह हरगिज़ हरगिज़ देवात्मा का नहीं, वह देवात्मा के देव विधान का साथी नहीं, वह देव विधान का विरोधी और पापी भी है।

देवात्मा ने सबसे मुख्य और ज़रूरी और प्रथम शुभ और हित को, सचाई वा सत्य को रखा है, और बातें सब बाद में आती हैं। सत्य और शुभ का साथ और झूठ और पाप से बग़ावत ही वाहद वा केवल सर्वोच्च विधान है। देवात्मा ने अपनी धर्म समाज का भी यही सत्य को लाना ओर झूठ को मिटाना, शुभ को लाना और पाप को मिटाना मुख्य लक्ष्य रखा है अर्थात्: -

1) देव धर्म विषयक सत्य ज्ञान का प्रचार
2) नीच गति दायक सब शक्तियों से मोक्ष और उच्चगति दायक सब शक्तियों का विकास करना धर्म समाज का मुख्य लक्ष्य और मुख्य उद्देश्य रखा है। जो इस लक्ष्य को जितना पूरा करता है, उतना ही वह देव विधानी है, जितना उसके उल्ट चलता है, उतना ही देवात्मा के सर्वोच्च विधान का विरोध ी वा शत्रु है, पाप पथगामी है।

देवात्मा ने देव समाज कौंसल, कर्मचारी, पुस्तकें, विकासालय और अन्य संस्थाएं आदि सबका महत्व उपरोक्त लक्ष्यों को लेकर रखा है। अगर वह उपरोक्त दोनों लक्ष्य जिस अंश पूरे करते हैं, तो उनका उतने अंश महत्व है। अगर वह उपरोक्त दोनों लक्ष्य पूरे नहीं करते तो न केवल उनका कोई महत्व नहीं रह जाता है, उल्टे वह विरोधी वा हानिकारक बनकर रह जाते हैं।

देवात्मा ने सदा शुभ और सत्य को सबसे बढ़कर और सबसे ज़रूरी महत्व दिया है और अन्य किसी चीज़ को भी वह महत्व नहीं दिया। यही एक मात्र देवात्मा का विधान है।

देवात्मा के लिए सदा शुभ और सत्य पहले हैं, देव समाज और कौंसल, कर्मचारी और देव शास्त्र और अन्य संस्थाएं आदि बाद में है। अगर देव समाज या अन्य धर्म समाज जितना शुभ लाती है और पाप मिटाती है, तो वह उतनी ही देवात्मा की है और देवात्मा के विधान की साथी है। अगर वह समाज कोई शुभ नहीं लाती वा पाप नहीं मिटाती तो वह देवात्मा की नहीं रहती और देवात्मा के विधान की भी साथी तो क्या, उल्टा विधान की कातिल और शत्रु बन जाती हे। भले उसकी नींव और स्थापना स्वयं देवात्मा ने ही की हो।

देवात्मा का सर्वोच्च विधान शुभ और सत्य को भी किसी कीमत पर और किसी सूरत में भी छोड़ने की या हाथ से जाने देने की इजाज़त नहीं देता, वह धर्म समाज को उसके प्रबन्ध को, उसके माननीय शास्त्र को वहां तक फौरन छोड़ने की इजाजत देता है जहां तक वह सब शुभ और सत्य का साथ नहीं देते। बल्कि शुभ और सत्य को मुख्य रखकर उन सबके पूर्ण और ज़ोरदार विरोध की इजाज़त देता है, मुख्य बात सदा सदा शुभ लाना है और सत्य लाना है। सदा केवल शुभ का साथ देना और सत्य का साथ देना है। धर्म समाज का या उसके प्रबन्ध का या उसकी गठन का महत्व उसके मुख्य उद्देश्य को लेकर है अगर वह अपने उपरोक्त दोनों मुख्य उद्देश्य पूरे नहीं करती और उल्टा उनके विरूद्ध चलती है, तो उसका न केवल कोई महत्व नहीं रह जाता बल्कि वह हानिकारक वा पापी बन जाती है।

देवात्मा की देव वाणी या समय समय पर उनके फरमान हमारा पथ प्रर्दशन करते हैं: -

1) "जिस सोसाईटी में अधिकांश लोग ऐसे मौजूद हों कि जो असत्य और पाप का पक्ष वा समर्थन करने के लिए उत्साह पूर्वक रहते हों, उसमें शामिल रहना अत्यन्त अनुचित और निहायत बेइज्जती की बात है।"

2) "हमारी समाज किसी मत की ख़ातिर नहीं बल्कि उच्च जीवन को लेकर है।"

3) "असल धर्म जो कुछ खराब है, उसे ठीक करने में है।"

4) "खराबी और कमी को दूर करने में अपनी शक्तियों को लगाने से जीवन बनता है और उसके साथ मेल करने या उसको दूर करने के लिए कोई हरक़त न करने से जीवन का नाश होता है।"

5) "जो सोसाईटी कई प्रकार के अपराधों को या ऐसा करने के लिए हौंसला देती है, वह सोसाईटी धार्मिक सोसाईटी नहीं हो सकती, न ही वह सोसाईटी जिसका लक्ष्य दुनियावी सुख, सम्मान, दान या धन दौलत हासिल करना हो, वह धार्मिक सोसाईटी

कहला सकती है। धार्मिक सोसाईटी वही है जो धर्म की ख़ातिर दुनियावी चीजों को छोड़ सके। जो शख़्स किसी और शख़्स को दूसरों पर इल्ज़ाम घड़ने और उन्हें बदनाम करने के लिए तैयार करता हो, वह कैसा काम करता है?

6) "हमेशा यह ख़्याल रहे कि कहीं धर्म से बढ़कर कोई और चीज अधिकार लाभ न करे। धर्म लाभ मुख्य है और सब कुछ गौण है।"

7) "यदि देव समाज के सभासदों की कभी ऐसी दशा हो जावे कि वह धन उपार्जन केवल इसलिए करने लगें कि वह उसके द्वारा स्वार्थ परायण होकर अपनी नीच वासनाएं चरितार्थ करें और उनका धन उन्हें केवल नीच से नीच बनाने में सहाय हो, तो हम चाहेंगे शीघ्र ऐसा समय आए कि ऐसी समाज न रहे और ऐसे जन धनी होने के स्थान में कंगाल और निर्धन हो जावें, और आप नीच होकर और को नीच न बना सकें।"

8) "यदि (देवात्मा) उनकी भी कोई शिक्षा इन सत्य की चारों कसौटीयों में से किसी कसौटी के अनुसार ठीक प्रमाणित न हो तो वह भी सत्य मानने के योग्य नहीं।"

हम मनुष्यात्मा हैं, हम सदा सदा के लिए सुख के खूंटे से बन्धे हुए हैं। पूर्ण सुख के दास हैं बड़े बड़े गुण और योग्यताएं रखकर भी हमारे अन्दर कमी रहती है। सुख अनुराग हमारी महत्व आकांक्षाएं बना देता है।

एक पढ़े लिखे बजुरग कर्मचारी जो बेहद अनुभवी हैं, प्राय: वर्षो के वर्ष एक प्रबन्ध के एक मुखिया के सम्बन्ध में खुले तौर पर विरोध करते थे।

उपरोक्त बजुरगवार कर्मचारी जी की महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति उपरोक्त मुखिया और उनके साथियों ने करनी आरम्भ कर दी, उनको "बड़ा बड़ा" कहना शुरू कर दिया, अपने आपको तुच्छ कहने लगे, उनकी खुशामद, चापलूसी हमदर्दी, सेवा और महिमा के गुण गान करने लगे। इस कमज़ोरी के वह कर्मचारी भी शिकार हो गए। चारों खाने चित गिर पड़े और वह अपने ऐलान बिलकुल ही भूल गए।

बिना किसी प्रकार की भी बेहतरी के आने के वह उन मुखिया जी के समर्थक बन गए। उनको ही असली मुख्य-धारा देखने लग गए। देवात्मा के विधान का रूप उनसे ओझल हो गया। वह पहले जिसको बुरा वा पाप वर्षो के वर्ष कहते रहे और समझते ओर बताते रहे, अब वह उसका पूरे ज़ोर से साथ दे रहे हैं और ऐसा करना विधान का साथ देना समझ रहे हैं।

यह है हमारा मनुष्य रूप! हमारे सब असूल, सारे दावे हमारा सुख अनुराग एक क्षण में ही लोप कर देता है।

सुख अनुराग हमारी सारी सोच को ही उल्टा देते हैं। अब उस बजुरग साथी कर्मचारी जी को विधान तोड़ने वाले, विधान की धज्जियां उड़ाने वाले, मूल नियमों की गर्दन मरोड़कर फैंकने वाले, सत्ता हवसी, समाज का नाश पे नाश करने वाले और करते रहने वाले विधान के साथी दिखाई देते हैं, मुख्य धारा के स्वामी नज़र आते हैं।

5/7 वर्ष बाद फिर उनका समर्थन और साथ देना, उनको विधान का साथ देना नज़र आता है। क्या करे मनुष्य रूप ही ऐसा है।

दरअसल हमारा विधान सुख अनुराग है, देवात्मा के साथ अति घनिष्ट सम्बन्ध के बिना कोई मनुष्य देव विधान का साथी ही नहीं बन सकता, उल्टा सुख के मूल धुरे के कारण उसके लिए देव विधान का विरोधी और शत्रु बन जाना स्वभाविक है।

(एक सेवक)

सत्य धर्म बोध उत्सव में शामिल होकर

विशेष सम्मान के योग्य श्रीमान जी सत्य देव की जय।

इस बार कल्याण सत्य धर्म बोध उत्सव में सभी सभाएं सुनी, दिल पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा, कि वास्तव में सत्य धर्म किसे कहते हैं, नीच जीवन का क्या हश्र होता है, आज के विज्ञान के युग में अभी तक मानव जगत अन्धकार में है। विज्ञान ने बहुत उन्नति की है, मानव जगत को सुख सुविधाऐं, आवागमन के साधन, सम्पर्क के लिए एक से एक बढ़कर Instrument, Medical Line में भी मानव जगत को अनेकों सुख सुविधाऐं प्रदान की हैं, लेकिन इतना कुछ होते हुए भी मानव जगत को उसकी वास्तविकता नहीं दिखा सका है। विज्ञान के पास कोई ऐसी मशीन नहीं है जो उसको आत्म रोग, रोगों के कारण, रोगों से होने वाले पतन और किस प्रकार मानव को उन रोगों से मोक्ष और उच्च जीवन प्रदान कर सके, केवल और केवल ये क्षमता यह शक्ति देवात्मा में निहित है।

मेरा महा सौभाग्य है कि मुझे देवात्मा का दर मिला, रोशनी की कुछ किरण मिली मेरा जीवन क्या है, जीवन कैसे जीना है, जीवन कितना कीमती है, इस बात का कुछ आभास हुआ। अपनी कमजोरियाँ अपने अवगुण कुछ नज़र आते हैं। दूसरों के लिए कुछ न कुछ सेवा प्रदान करने की बात मन में आती है। सभाओं में योग देने से अपना भला महसूस होता है, गुरू महाराज के ग्रन्थों का अध्ययन करने की इच्छा भी जागृत हुई है।

दिल में यह अभिलाषा है कि गुरू महाराज की तरफ ज्यादा ध्यान जावे। कुछ हितकर जीवन बने, अपने दोष और कमियाँ ज़्यादा से ज़्यादा सम्मुख ला सकूँ और उन्हें दूर करने के लिए गुरू महाराज से अधिक से अधिक आत्मिक बल मिल सके, ऐसी मेरी कामना है ऐसी मेरी भावना है।

धन्यवाद सहित आपका तुच्छ
जगजीत सिंह (लुधियाना)

"अगर किसी मकसद के लिए खड़े हो तो एक पेड़ की तरह रहो, और गिरो तो बीज की तरह ताकि दुबारा उगकर फिर से उसी मकसद के लिए जंग कर सकें।"

सिगरेट छोड़ने के लिए ये खाएं

सिगरेट की लत छुड़ाने के कई तरीके हैं। इनमें दवाओं से लेकर निकोटिन पैच और सम्मोहन कला तक शामिल है, लेकिन महज कुछ स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थो की मदद से भी इस लत से छुटकारा पा सकते हैं। यह बात सामने आई है डयूक यूनिवर्सिटी में हुए शोध से।

कहते हैं धूम्रपान और मद्यपान जैसी बुरी आदतें दो ही स्थितियों में जाती हैं। एक, जब डॉक्टर मना कर दे। दूसरा, जब जेब साथ न दे। यही वजह है कि नए वर्ष से लेकर तंबाकू निषेध दिवस पर सिगरेट न पीने का संकल्प 24 घंटे बीतते-बीतते ध्वस्त हो जाता है। चाहकर भी लोग सिगरेट से तौबा नहीं कर पाते। यदि आप वास्तव में इससे छुटकारा पाना चाहते हैं, तो कुछ ऐसे खाद्य पदार्थो का सहारा लें, जो सिगरेट की लत को कम करने में मदद करते हैं। बाद में आप अपनी इच्छाशक्ति के बलबूते इस बुरी आदत से हमेशा-हमेशा के लिए निजात पा सकते हैं। आइए जानते हैं कि वे कौन से खाद्य पदार्थ हैं, जो आपको सिगरेट से दूर ले जा सकते हैं।

दूध: दूध को हम ऐसे पेय पदार्थ के रूप में जानते हैं, जिसमें शरीर के लिए आवश्यक सारे तत्व होते हैं। लेकिन क्या आप जानते हैं कि दूध आपकी सिगरेट की लत को भी छुड़ा सकता है। डयूक्स यूनिवर्सिटी में हुए शोध के मुताबिक अगर सिगरेट से पहले एक गिलास दूध पी लें तो आपको सिगरेट पीने में बिल्कुल मजा नहीं आएगा। आपको इसका धुंआ कसैला लगेगा। यानी आप अपनी सिगरेट को दूध में डुबो कर सुखा लें। फिर जितनी बार इन्हें मुंह में लगाएंगे, आपको धुंए का कसैलापन आगे पीने से रोकेगा। एक समय ऐसा भी आएगा, जब तलब लगते ही मुंह में कसैलापन घुल जाएगा। बस, इसके बाद आप सिगरेट से आसानी से तौबा कर सकते हैं।

सब्जियां : कुछ सब्जियों मसलन गाजर, तुरई, खीरा और बैंगन को खाने के बाद सिगरेट पी जाए, तो दूध के प्रभाव सरीखा अनुभव प्राप्त होता है। यानी इनका सेवन करें और सिगरेट कम करें। यही नहीं, कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि इन सब्जियों का भरपूर मात्रा में सेवन निकोटिन पर निर्भरता कम करता हैं हालांकि सिगरेट छोड़ने के अभियान के दौरान मटर और कॉर्न सरीखी सब्जियों से दूर रहें। इनमें मौजूद शर्करा इसकी तलब को और बढ़ा देगा। अब जब अगली बार सिगरेट की तलब लगे, तो गाजर खा लें या थोड़ी सी पालक भी सिगरेट से वितृष्णा पैदा करने में कारगर है।

ऑरेंज जूस : सिगरेट मे शरीर को विटामिन सी की आपूर्ति प्रभावित होती है। इसकी भरपाई निकोटिन करने लगता है। ऐसे में यदि आप इस आदत से जल्द से जल्द छुटकारा पाना चाहते हैं, तो खूब ऑरेंज जूस पिएं या रसदार फलों का ज्यादा से ज्यादा सेवन करें। नीबूं, अनार इसमें आपकी मदद करेंगे।

नमकीन खाद्य पदार्थ : जब भी सिगरेट की तलब हावी हो, तो कुछ भी नमकीन खा लें या चुटकी भर नमक ही चाट लें। इससे तलब खत्म हो

जाएगी।

जिनसेंग : यह चीनी जड़ी-बूटी सिर्फ वजन कम करने में ही कारगर नहीं है, बल्कि यह निकोटिन द्वारा छोड़े जाने वाले डोपामाइन के प्रभाव को भी कम करने में कारगर है। हालांकि इसका नियमित सेवन नहीं करना चाहिए। महीने में तीन-चार बार ही पर्याप्त है।

च्युइंग गम : मुंह को व्यस्त रखने के लिए शुगर फ्री च्युइंग गम बेहतर विकल्प है।

ध्यान रखें : पूरी तरह अल्कोहल, कैफीन और रेड मीट के भी सेवन से बचें। ये सिगरेट की तलब बढ़ाते हैं।

भजन

जिए जा रहे हैं, बस हम जीए जा रहे हैं, सफर को ख़त्म हम किए जा रहे हैं।
हम कहां जा रहे हैं? कहां है ठिकाना, न सोचा कभी हमने, न समझा न जाना,
जो भी है चाहा दिल ने, वह किए जा रहे हैं।
स्पष्ट ही नहीं हम, फिर भी श्रेष्ट बन गए हैं, अदाकारी से अपनी अधिकारी लगने लगे हैं,
दोहरे जीवन से हानि, आत्मिक किए जा रहे हैं।
लगना ही चाहें-हम-सेवक बन न सके हम, स्वार्थो को अपने नष्ट, कर न सके हम,
भेंट जीवन को करने का, नाटक किए जा रहे हैं।
आत्म अन्धकार सब का अंहकार ही बना है, नियम तोड़कर भी, कोई मिशन में तना है,
रोग पदवी का मोल सब लिए जा रहे हैं।
खो गया है हमारा कुछ हम जिसें ढूंडतें हैं, जाल शब्दों के बुनकर, भगवन को भी पूजते हैं,
सदा दिखावे का जीवन ही जिए जा रहे हैं।
सबको अपनी पड़ी है, पर की किस को फिक्र है, कथा वाचक बने हैं, देवत्व सिंह जी का जिक्र है,
बनकर धनवान नाटक धर्म का किए जा रहे हैं।
ज्ञान भगवन का पाकर, धूम अपनी मचा ली, रहे आत्म बोध से, हम खाली खाली,
शान झूठी के पर्दे ही सीए जा रहे हैं।
सोच विज्ञान मूलक ने ही है जिसको झंझोड़ा, बना है वह अधिकारी, बेशक थोड़ा थोड़ा,
विकसित देव प्रभाव ही, उसको किए जा रहे हैं।
देव जीवन ही अद्वितीय है, आदर्श मेरा, है मुबारक किसी को, बेशक देव समाज का डेरा,
जो कबजे से ही खुश मन को किए जा रहे हैं।

(ओम प्रकाश अदर्श)

नयाब घरेलू नुसखे

* पैरों की दुर्गंध को रोकने के लिए चाय के उबले पानी को ठंडा कर उसमें 20 मिनट तक पैरों को डुबो कर रखें। ध्यान रहें कि चाय का पानी उबालते समय इसमें चाय की मात्रा अधिक हो।
* सिगरेट की आदत छोड़नी हो, तो तलब उठने पर थोड़ा नमक चाटें।
* चोट लग जाने पर जख्म के ऊपर देसी घी और कपूर बराबर मात्रा में मिला कर लगाएं। इससे दर्द कम होगा। खून का बहना भी बंद हो जाएगा।
* मोच आने पर उस स्थान पर तेजपत्ते को पीस कर लगाएं। दर्द गायब हो जाएगा।
* अनार के पत्ते भी मोच पर रामबाण की तरह काम करते हैं। इन्हें पीस कर मोचवाली जगह पर लगा कर पटटी बांध लें।
* हरे नारियल का पानी पीने से एसिडिटी से राहत मिलेगी।
* तरबूज और खीरा मिला कर सलाद की तरह खाएं या फिर इसका जूस पीएं। एसिडिटी में आराम मिलेगा।
* तेज धूप से जली त्वचा को राहत पहुंचाने के लिए छाछ में 2 चम्मच टमाटर का रस मिलाएं। रूई के फाहे को इसमें भिगो कर जली हुई त्वचा पर लगाएं। लगभग 10 मिनट बाद ठंडे पानी से धो लें।
* जी मिचलाने पर या उल्टी जैसा महसूस होने पर बर्फ का टुकड़ा मुंह में डाल कर चूसें।
* आधा चम्मच जीरा मुंह में डाल कर धीरे-धीरे चूसें या चबाएं, उल्टी नहीं आएगी।
* चाय बनाते समय इसमें दालचीनी और अदरक मिला लें। इससे पीने से उल्टी नहीं आएगी। इस चाय को पीने से मिचलाने की समस्या भी दूर हो जाती है।
* यूरिनरी इन्फेक्शन होने पर युरिन में जलन होने पर 1/2 चम्मच खाने का सोडा 1 गिलास पानी में घोल कर पिएं। तुरंत आराम मिलेगा।
* मस्सों से छुटकारा पाने के लिए सफेद सिरके में रूई के फाहे को डुबोएं। इसे रातभर के लिए मस्से पर रख कर छोड़ दें। सुबह मस्सा झड़ जाएगा।
* चेहरे से दाग-धब्बे हटाने के लिए मसूर दाल और तरबूज के बीजों से तैयार पेस्ट गाय के दूध में मिला कर लगाएं। दस मिनट बाद चेहरा धो लों।
* रूखी त्वचा में जान भरने के लिए दही, शहद और केले की अच्छी तरह मिला कर चेहरे पर लगाएं दस मिनट बाद धो लें।
* बार-बार युरिन आने की शिकायत हो, तो काला तिल और गुड़ बराबर मात्रा में ले कर गाढ़ी चाशनी की मदद से लडडू तैयार करें। नाश्ते में और सोने से पहले 1-1 छोटे लड्डू खाने से तकलीफ दूर हो जाएगी।
* जिन लोगों को गरमी के कारण पीले या लाल रंग का युरिन कष्ट से या कम मात्रा में आता है, उन्हें नारियल के पानी के नियमित सेवन से लाभ पहुंचता है।

जीवन प्रसंग

सेनापति को अपने व्यवहार से ही मिल गया सवाल का जवाब

एक दार्शनिक समस्याओं के अत्यंत सटीक समाधान बताते थे। एक बार उनके पास एक सेनापति पहुंचा और स्वर्ग-नर्क के विषय में जानकारी चाही। दार्शनिक ने उसका पूर्ण परिचय पूछा तो उसने अपने वीरतापूर्ण कार्यों के बारे में सविस्तार बताया। उसकी बातें सुनकर दार्शनिक ने कहा-शक्ल-सूरत से तो आप सेनापति नहीं, भिखारी लगते हैं। मुझे विश्वास नहीं होता कि आप में हथियार उठाने की क्षमता भी होगी। दार्शनिक की अपमानजनक बातें सुनकर सेनापति को गुस्सा आ गया। उसने म्यान से तलवार निकाल ली। यह देख दार्शनिक ठहाका लगाते हुए बोले-अच्छा तो आप तलवार भी रखते हैं। यह शायद काठ की होगी। लोहे की होती तो अब तक आपके हाथ से छुटकर गिर गई होती। अब तो सेनापति आपे से बाहर हो गया। उसकी आंखें क्रोध से लाल हो गई और वह दार्शनिक पर हमला करने को उद्यत हो गया। तभी दार्शनिक ने गंभीर होकर कहा-बस यही नर्क है। क्रोध में उन्मत्त होकर आपने अपना विवेक खो दिया और मेरी हत्या करने को तत्पर हो गए। दार्शनिक की बात सुनकर सेनापति ने शांत होकर तलवार म्यान में वापस रख ली। तब दार्शनिक ने कहा-विवेक जाग्रत होने पर व्यक्ति को अपनी भूलों का अहसास होने लगता है। मन शांत होने से स्थिरता आती है और दिव्य आनंद की अनुभूति होती है। यही अनुभूति स्वर्ग है। सेनापति को अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया। सार यह है कि आत्मनियंत्रण से विवेक उपजता है, जिसके कारण अनुचित कर्म या व्यवहार पर रोक लगती है और जीवन में शांति व संतोष की अनुभूति होती है।

बाहरी प्रतिष्ठा के साथ भीतरी पवित्रता ही है सुख का सूत्र

अभूषण कितने ही कीमती या सुन्दर हो, लेकिन एक वक्त के बाद उन्हें चमकाना जरूर पड़ता है। केवल इस्तेमाल करने पर ही नहीं, रखे-रखे भी उनकी चमकी फीकी पड़ जाती है। सोने को भी निखरने के लिए आग बर्दाश्त करनी पड़ती है। नग-नगीने भी पड़े-पड़े प्रभाव खोने लगते हैं। यही हाल इंसान के व्यक्तित्व और चरित्र का है। इसे कभी-कभी नहीं, रोज मांजना पड़ेगा, क्योंकि हर सांस गंदगी और सफाई दोनों की संभावना लिए भीतर-बाहर आती जाती है। सांस लेने का मतलब फेफड़ों में हवा भरना भर नहीं। यह प्रकृति के प्राणतत्व के पान करने का दिव्य अवसर होता है। कुदरत ने हमें अपने व्यक्तित्व और चरित्र को संवारने के लिए सहज ही सुविधा दी है। फिर भी इंसान है कि दोहरा जीवन जीने लगता है। बाहर से प्रतिष्ठा और भीतर से पतन, दोनों एक साथ चला लेता है। लोगों के कंधे पर चढ़ ऊंचा पद पाने वाले भीतर से पूरी तरह गिरे रहते हैं। उनकी बाहरी प्रतिष्ठापूर्ण मुस्कान भीतर वासनामयी लहरों से संचालित रहती है। लेकिन सच यह है कि ऐसा बहुत दिनों तक नहीं चल पाता। लोगों को तो धोखा दिया जा सकता है, पर स्वयं से छल कब तक करेंगे! कुछ समय बाद एक ऊब, उदासी और डर शुरू हो जाता है। अपनी ही छवि, प्रतिष्ठ अपने को ही डराने लगती है। इसीलिए बाहर-भीतर का भेद मिटाकर जिएं। बाहर की प्रतिष्ठा को भीतर के सद्चरित्र से जोड़े रखें। आंतरिक पवित्रता बाहर कभी उदास नहीं रहने देगी। भीतर का मटमैलापन थोड़े दिन में बाहर के सुख को भी ऊब में बदल देगा।

Published on 5th of the month
20
नवम्बर – 2012
WPP - Regd. Postal No.CHD (0077) 2012-14
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री – देव – धर्म – मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर*
म. नं. 3154, सैक्टर 21 – डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।

Book Posts